भारत में आधुनिक रसायनविज्ञान के जनक आचार्य प्रफुल्ल चन्द्र राय

कृष्ण कुमार मिश्र

आचार्य प्रफुल्ल चन्द्र राय भारत में रसायन विज्ञान के जनक माने जाते हैं। वे एक सादगीपसंद तथा महान देशभक्त वैज्ञानिक थे जिन्होंने रसायन प्रौद्योगिकी में राष्ट्र के स्वावलंबन हेतु स्तुत्य प्रयास किए। वर्ष 2011 को संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा अंतरराष्ट्रीय रसायन वर्ष के रूप में मनाया जा रहा है। भारत के लिए इसका महत्त्व इसलिए और बढ़ जाता है क्योंकि यह वर्ष एक मनीषी तथा महान भारतीय रसायनविज्ञानी आचार्य प्रफुल्ल चन्द्र राय के जन्म का 150वाँ वर्ष भी है। सही मायनों में आचार्य राय भारत में वैज्ञानिक तथा औद्योगिक पुनर्जागरण के स्तम्भ थे। वे शैक्षिक सुधारों, औद्योगिक विकास, रोजगार सृजन, गरीबी उन्मूलन, आर्थिक आजादी तथा देश में राजनीतिक उन्नति, इन सभी के लिए फिक्रमन्द थे। उनके सोच का दायरा बहुत व्यापक था। उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्ध में आजादी की लड़ाई के साथ साथ देश में ज्ञान-विज्ञान की भी एक नई लहर उठी थी। इस दौरान अनेक मूर्धन्य वैज्ञानिकों ने जन्म लिया। इसमें जगदीश चंद्र बसु, प्रफुल्ल चन्द्र राय, श्रीनिवास रामानुजन और चन्द्रशेखर वेंकटरमन जैसे महान वैज्ञानिकों का नाम लिया जा सकता है। इन्होंने देश की पराधीनता के बावजूद अपनी लगन तथा निष्ठा से विज्ञान में उस ऊँचाई को छुआ जिसकी कल्पना नहीं की जा सकती थी। ये आधुनिक भारत की पहली पीढ़ी के वैज्ञानिक थे जिनके कार्यों और आदर्शों से भारतीय विज्ञान को एक नई दिशा मिली। इन वैज्ञानिकों में आचार्य प्रफुल्ल चंद्र राय का नाम बड़े गर्व से लिया जाता है। वे वैज्ञानिक होने के साथ-साथ एक महान देशभक्त भी थे। वास्तव में वे भारतीय ऋषि परम्परा के प्रतीक थे। इनका जन्म 2 अगस्त, 1861 ई. में जैसोर जिले के ररौली गाँव में हुआ था। यह स्थान अब बांगलादेश के खुलना जिले में पड़ता है। उनके पिता हरिश्चंद्र राय इस गाँव के प्रतिष्ठित जमींदार थे। वे प्रगतिशील तथा खुले दिमाग के व्यक्ति थे। आचार्य राय की माँ भुवनमोहिनी देवी भी एक प्रखर चेतना-सम्पन्न महिला थीं। जाहिर है, प्रफुल्ल पर इनका प्रभाव पड़ा था।

आचार्य राय के पिता का अपना पुस्तकालय था। उनका झुकाव अंग्रेजी शिक्षा की ओर था। इसलिए उन्होंने अपने गाँव में एक मॉडल स्कूल की स्थापना की थी जिसमें प्रफुल्ल ने प्राथमिक शिक्षा पाई। बाद में उन्होंने अल्बर्ट स्कूल में दाखिला लिया। सन 1871 में प्रफुल्ल ने अपने बड़े भाई नलिनीकांत के साथ डेविड हेयर के स्कूल में प्रवेश लिया। डेविड हेयर खुद शिक्षित नहीं थे परंतु उन्होंने बंगाल में पश्चिमी शिक्षा के प्रसार में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। राय ने अपनी आत्मकथा में जिक्र किया है कि किस तरह हेयर स्कूल में उनके सहपाठी उनकी खिल्ली उड़ाया करते थे। छात्र उन्हें 'बंगाल' उपनाम से चिढ़ाया करते थे। राय उस स्कूल में ज्यादा दिन नहीं पढ़ सके। बीमारी के कारण उन्हें न सिर्फ स्कूल छोड़ना पड़ा बल्कि अपनी नियमित पढ़ाई भी छोड़नी पड़ी। लेकिन उस दौरान उन्होंने अंग्रेजी साहित्य को उत्कृष्ट पुस्तकों तथा बांग्ला की ऐतिहासिक और साहित्यिक रचनाओं का गहन अध्ययन किया।

आचार्य राय की अध्ययन में शुरू से ही बड़ी रुचि थी। वे बारह साल की उम्र में ही चार बजे सुबह उठ जाते थे। पाठ्य-पुस्तकों के अलावा वे इतिहास तथा जीवनियों में अधिक रुचि रखते थे। 'चैम्बर्स बायोग्राफी' उन्होंने कई बार पढ़ी थी। वे सर डब्ल्यू. एम. जोन्स, जॉन लेडेन और उनकी भाषायी उपलब्धियों, तथा फ्रैंकलिन के जीवन से काफी प्रभावित थे। सन् 1879 में उन्होंने दसवीं की परीक्षा उत्तीर्ण की। फिर आगे की पढ़ाई मेट्रोपोलिटन कॉलेज (अब विद्यासागर कॉलेज) में शुरू की। यह एक राष्ट्रीय शिक्षण संस्था थी तथा यहाँ फीस भी कम थी। परन्तु वहाँ दाखिला उन्होंने सिर्फ आर्थिक कारणों से नहीं लिया था बल्कि उस समय पूजनीय माने जाने वाले सुरेन्द्रनाथ बनर्जी वहाँ अंग्रेजी गद्य को प्रोफेसर थे और प्रशांत कुमार लाहिड़ी वहाँ अंग्रेजी कविता पढ़ाते थे। उस समय रसायन विज्ञान ग्यारहवीं कक्षा का एक अनिवार्य विषय था। वहीं पर पेडलर महाशय की उत्कृष्ठ प्रयोगात्मक क्षमता देखकर धीरे-धीरे वे रसायन विज्ञान की ओर उन्मुख हुए। अब प्रफुल्ल चन्द्र राय ने रसायन विज्ञान को अपना मुख्य विषय बनाने का निर्णय कर लिया था। पास में प्रेसिडेंसी कॉलेज में विज्ञान की पढ़ाई का अच्छा इंतजाम था इसलिए वह बाहरी छात्र के रूप में वहाँ भी जाने लगे।

उसी समय प्रफुल्ल चन्द्र के मन में गिलक्राइस्ट छात्रवृत्ति के इम्तहान में बैठने की इच्छा जगी। यह इम्तहान लंदन विश्वविद्यालय की मैट्रिक परीक्षा के बराबर माना जाता था। इस इम्तहान में लैटिन या

*डॉ. कृष्ण कुमार मिश्र, वैज्ञानिक (रीडर-एफ) होमी भाभा विज्ञान शिक्षा केन्द्र टाटा मूलभूत अनुसंधान संस्थान मानखुर्द, मुंबई-400088, मो. 9867210755, ईमेल : kkm@hbcse.tifr.res.in

ग्रीक तथा जर्मन भाषाओं का ज्ञान होना जरूरी था। अपने भाषा-ज्ञान को आजमाने का प्रफुल्ल के लिए यह अच्छा अवसर था। इस इम्तहान में सफल होने पर उन्हें छात्रवृत्ति मिल जाती और आगे के अध्ययन के लिए वह इंग्लैंड जा सकते थे। आखिर अपनी लगन एवं मेहनत से वह इस परीक्षा में कामयाब रहे। इस प्रकार वे इंग्लैंड के लिए रवाना हो गए। नया देश, नए रीति-रिवाज; पर प्रफुल्लचंद्र इन सबसे जरा भी चिंतित नहीं हुए। अंग्रेजों की नकल उतारना उन्हें पसन्द नहीं था, उन्होंने चोगा और चपकन बनवाई और इसी वेश में इंग्लैंड गए। उस समय वहाँ लंदन में जगदीशचन्द्र बसु अध्ययन कर रहे थे। राय और बसु में परस्पर मित्रता हो गई।

प्रफुल्ल चन्द्र राय को एडिनबरा विश्वविद्यालय में अध्ययन करना था जो विज्ञान की पढ़ाई के लिए मशहूर था। वर्ष 1885 में उन्होंने पीएच.डी. का शोधकार्य पूरा किया। तदनंतर 1887 में "ताम्र और मैग्नीशियम समूह के 'कॉन्जुगेटेड' सल्फेटों के बारे में किए गए उनके कार्यों को मान्यता देते हुए एडिनबरा विश्वविद्यालय ने उन्हें डी.एस-सी. की उपाधि प्रदान की। उनके उत्कृष्ट कार्यों के लिए उन्हें एक साल की अध्योतावृत्ति मिली तथा एडिनबरा विश्वविद्यालय की रसायन सोसायटी ने उनको अपना उपाध्यक्ष चुना। तदोपरान्त वे छह साल बाद भारत वापस आए। उनका उद्देश्य रसायन विज्ञान में अपना शोधकार्य जारी रखना था। अगस्त 1888 से जून 1889 के बीच लगभग एक साल तक डॉ. को नौकरी नहीं मिली थी। यह समय उन्होंने कलकत्ते में बसु के घर पर व्यतीत किया। इस दौरान खाली रहने पर उन्होंने रसायनविज्ञान तथा वनस्पतिविज्ञान की पुस्तकों का अध्ययन किया और रॉक्सबोर्ग की 'फ्लोरा इंडिका' और हॉकर की 'जेनेरा प्लाण्टेरम' की सहायता से कई पेड़-पौधों की प्रजातियों को पहचाना एवं संग्रहीत किया। उन्हें जुलाई 1889 में प्रेसिडेंसी कॉलेज में 250 रुपए मासिक वेतन पर रसायनविज्ञान के सहायक प्रोफेसर के पद पर नियुक्त किया गया। यहीं से उनके जीवन का एक नया अध्याय शुरू हुआ। सन् 1911 में वे प्रोफेसर बने। उसी वर्ष ब्रिटिश सरकार ने उन्हें 'नाइट' की उपाधि से सम्मानित किया। सन् 1916 में वे प्रेसिडेंसी कॉलेज से रसायन विज्ञान के विभागाध्यक्ष के पद से सेवानिवृत्त हुए। फिर 1916 से 1936 तक उसी जगह एमेरिटस प्रोफेसर के तौर पर कार्यरत रहे। सन् 1933 में काशी हिंदू विश्वविद्यालय के संस्थापक तथा रेक्टर पं. मदन मोहन मालवीय ने आचार्य राय को डी.एस.सी. की मानद उपाधि से विभूषित किया। वे देश-विदेश के अनेक विज्ञान संगठनों के सदस्य रहे।

एक दिन आचार्य राय अपनी प्रयोगशाल में पारे और तेजाब से प्रयोग कर रहे थे। इससे संयोगवश मरक्यूरस नाइट्राइट (Hg_2No_2) यौगिक बन गया। वास्तव में वे मरक्यूरिक नाइट्रेट (Hg_2No_3) बनाना चाहते थे जिससे वे माध्यमिक उत्पाद के तौर पर कैलोमल (Hg_2cl_2) पदार्थ बनता है। वास्तव में मरक्यूरस नाइट्राइट की खोज ने आचार्य राय के जीवन में एक नए अध्याय की शुरुआत की। एक अन्य अहम खोज जो आचार्य ने की, वह थी अमोनियम नाइट्राइट अस्थायी होता है तथा इसका तेजी से तापीय विघटन होता है। राय ने अपने इन निष्कर्षों को फिर से लंदन की रॉयल केमिकल सोसायटी में प्रस्तुत किया।

जैसा कि हम जानते हैं, विज्ञान और उद्योगधंधों का परस्पर गहरा संबंध होता है। उस समय हमारे देश का कच्चा माल सस्ती दरों पर इंग्लैंड जाता था। वहाँ से तैयार वस्तुएँ हमारे देश में आती थीं और ऊँची दामों पर बेची जाती थीं। इस समस्या के निराकरण के उद्देश्य से डॉ. राय ने स्वदेशी उद्योग की नींव डाली। उन्होंने 1892 में अपने घर में ही एक छोटा-सा कारखाना निर्मित किया। उनका मानना था कि इससे बेरोजगार युवकों को मदद मिलेगी। इसके लिए उन्हें कठिन परिश्रम करना पड़ा। वे हर दिन कॉलेज से शाम तक लौटते, फिर कारखाने के काम में लग जाते तथा यह सुनिश्चित करते कि पहले के ऑर्डर पूरे हुए कि नहीं। डॉ. राय को इस कार्य में थकान के बावजूद आनंद आता था। उन्होंने एक लघु उद्योग के रूप में देसी सामग्री की मदद से औषधियों का निर्माण शुरू किया। बाद में इसने एक बड़े कारखाने का स्वरूप ग्रहण किया जो आज "बंगाल केमिकल्स एंड फार्मास्यूटिकल वर्क्स" के नाम से सुप्रसिद्ध है। उनके द्वारा स्थापित स्वदेशी उद्योगों में गंधक से तेजाब बनाने का कारखाना, कलकत्ता पॉटरी वर्क्स, बंगाल एनामेल वर्क्स, तथा स्टीम नेविगेशन, प्रमुख हैं।

डॉ. राय को ग्राम्य जीवन बहुत आकर्षित करता था। वे अक्सर ग्रामीणों से उनका सुख-दुःख, हालचाल लिया करते थे। वे अपनी माँ के भंडारे से अच्छी-अच्छी खाद्यसामग्री ले जाकर ग्रामीणों में बाँट देते थे। सन् 1922 के बंगाल के अकाल के दौरान राय की भूमिका अविस्मरणीय है। 'मैनचेस्टर गार्डियन' के एक संवाददाता ने लिखा थाः "इन परिस्थितियों में रसायनविज्ञान के एक प्रोफेसर पी.सी. राय सामने आए और उन्होंने सरकार की चूक को सुधारने के लिए देशवासियों का आह्वान किया। उनके इस आह्वान को काफी उत्साहजनक प्रतिसाद मिला। बंगाल की जनता ने एक महीने में ही तीन लाख रुपए की मदद की। धनाढ्य परिवार की महिलाओं ने सिल्क के वस्त्र एवं गहने तक दान कर दिए। सैकड़ों युवाओं ने गाँवों में लोगों को सहायता सामग्री वितरित की। डॉ. राय की अपील का इतना उत्साहजनक प्रत्युत्तर मिलने का एक कारण तो बंगाल की जनता के मन में मौजूद विदेशी सरकार को धिक्कारने की इच्छा थी। इसका आंशिक कारण पीड़ितों के प्रति उपजी स्वाभाविक सहानुभूति थी, पर काफी हद तक उसका कारण पी. सी. राय का असाधारण व्यक्तित्व एवं उनकी सामाजिक प्रतिष्ठा थी। वह अच्छे शिक्षक के साथ एक सफल संगठनकर्ता भी थे।

आचार्य राय ने स्वतन्त्रता आन्दोलन में भी सक्रिय भागीदारी निभाई। गोपाल कृष्ण गोखले से लेकर गाँधी जी तक से उनका मिलना-जुलना था। कलकत्ता में गांधी जी की पहली सभा कराने का

श्रेय डॉ. राय को ही जाता है। राय एक सच्चे देशभक्त थे उनका कहना था"विज्ञान प्रतीक्षा कर सकता है, पर स्वराज नहीं।" वह स्वतंत्रता आन्दोलन में एक सक्रिय भागीदार थे। उन्होंने असहयोग आन्दोलन के दौरान भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के रचनात्मक कार्यों में मुक्तहस्त आर्थिक सहायता दी। उन्होंने अपने एक भाषण में कहा था"मैं रसायनशाला का प्राणी हूँ। मगर ऐसे भी मौके आते हैं जब वक्त का तकाजा होता है कि टेस्ट-ट्यूब छोड़कर देश की पुकार सुनी जाए।" लेकिन अफसोस! डॉ. राय देश को स्वतंत्र होते अपनी आँखों से नहीं देख सके।

शोध संबंधी जर्नलों में राय के लगभग 200 परचे प्रकाशित हुए। इसके अलावा उन्होंने कई दुर्लभ भारतीय खनिजों को सूचीबद्ध किया। उनका उद्देश्य मेंडलीफ की आवर्त-सारिणी में छूटे हुए तत्त्वों को खोजना था। उनका योगदान सिर्फ रसायन विज्ञान सम्बन्धी खोजों तथा लेखों तक सीमित नहीं है। उन्होंने अनेक युवकों को रसायन विज्ञान की तरफ प्रेरित किया। डॉ. राय ने एक और महत्त्वपूर्ण काम किया। उन्होंने दो खंडों में 'हिस्ट्री ऑफ हिन्दू केमिस्ट्री' नामक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ लिखा। इससे दुनिया को पहली बार यह जानकारी मिली कि प्राचीन भारत में रसायन विज्ञान कितना समुन्नत था। इसका प्रथम खण्ड सन् 1902 में प्रकाशित हुआ तथा द्वितीय खण्ड 1908 में। इन कृतियों को रसायनविज्ञान के एक अनूठे अवदान के रूप में माना जाता है।

आचार्य राय ने बांग्ला तथा अंग्रेजी, दोनों भाषाओं में लेखन किया। सन् 1893 में उन्होंने 'सिम्पल जुआलजी' नामक पुस्तक लिखी जिसके लिए उन्होंने जीवविज्ञान की मानक पुस्तकें पढ़ीं, तथा चिड़ियाघरों और संग्रहालयों का स्वयं दौरा किया। उन्होंने 'बासुमति', 'भारतवर्ष', 'बंगबानी', 'प्रवासी', 'आनंदबाजार पत्रिका' और 'मानसी' जैसी पत्रिकाओं में बहुत सारे लेख लिखे। ऐसा कहा जाता है कि उन्होंने अपनी आय का 90% दान कर दिया। सन् 1922 में उन्होंने महान भारतीय कीमियागार नागार्जुन के नाम पर वार्षिक पुरस्कार शुरू करने के लिए दस हजार रुपए दिए। सन् 1936 में आशुतोष मुखर्जी के नाम पर भी एक शोध-पुरस्कार शुरू करने के लिए उन्होंने दस हजार का अनुदान दिया। कलकत्ता विश्वविद्यालय को उसके रसायनविज्ञान के विस्तार तथा विकास के लिए उन्होंने 1,80,000 रुपए का अनुदान दिया। ऐसे उदारमना विज्ञानी का 16 जून, 1944 को उनका देहावसान हो गया।

उनके बारे में यूनिवर्सिटी कॉलेज ऑफ साइंस, लंदन के प्रोफेसर एफ.जी. डोनान ने लिखा थाः "सर पी.सी. राय जीवन भर केवल एक संकीर्ण दायरे में बँधे प्रयोगशाला-विशेषज्ञ बन कर नहीं रहे। अपने देश की तरक्की तथा आत्मनिर्भरता हमेशा उनके आदर्श रहे। उन्होंने अपने लिए कुछ नहीं चाहा, तथा सादगी एवं मितव्ययिता का कठोर जीवन जीया। राष्ट्र एवं समाज सेवा उनके लिए सर्वोपरि रहे। वे भारतीय विज्ञान के प्रणेता थे।" वे कॉलेज परिसर में ही एक कमरे में रहते थे। अपने कपड़े खुद ही साफ करते, तथा जूते स्वयं पॉलिश करते। उन्होंने सन्यस्त तथा व्रती का जीवन बिताया। उन्होंने परिवार नहीं बसाया, तथा आजीवन अविवाहित रहे। सांसारिक बंधनों तथा मोहमाया एवं परिग्रह से अपने को कोसों दूर रखा। अपने देहावसान से पूर्व आचार्य प्रफुल्ल चन्द्र राय ने अपनी समस्त संपत्ति सामाजिक कार्यों के लिए दान कर दी थी। ऐसा था ऋषितुल्य एवं प्रेरणादायी उनका व्यक्तित्व एवं कृतित्व। सचमुच, वे भारतीय विज्ञानाकाश के देदीप्यमान नक्षत्र हैं।